

वैश्वीकरण के दौर में खासी सांस्कृतिक पहचान: परिवर्तन, निरंतरता और पुनर्संरचना का समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ चंदन भारद्वाज

सहायक प्राध्यापक, मारवाड़ी कॉलेज, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार

सारांश:

प्रस्तुत शोध-पत्र वैश्वीकरण और आधुनिकता के संदर्भ में खासी सांस्कृतिक पहचान में हो रहे सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तनों का समाजशास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इस विश्लेषण में मुख्य रूप से खासी समाज की मातृवंशीय व्यवस्था, परिवार, नातेदारी, लैंगिक संबंधों, शिक्षा, भाषा, धर्म और युवा-संस्कृति को आधार बनाकर उनमें हो रहे परिवर्तनों को समझने का प्रयास किया गया है। यह अध्ययन पूर्णतः द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है। इसके लिए मातृवंशीय खासी समाज तथा उस पर पड़ रहे वैश्वीकरण के प्रभावों से संबंधित पुस्तकों, शोध-पत्रों, शोध-प्रबंधों तथा सरकारी एवं विश्वस्तरीय संस्थागत प्रकाशनों का अध्ययन किया गया है। इसके लिए उपलब्ध सामग्री को प्रमुख विषयों में विभाजित कर उनका गुणात्मक एवं विषयगत विश्लेषण किया गया है, साथ ही विभिन्न निष्कर्षों की आपस में तुलना भी की गई है। इस प्रक्रिया से यह समझने का प्रयास किया गया है कि खासी समाज के किन क्षेत्रों में परंपरा आज भी सुदृढ़ बनी हुई है और किन क्षेत्रों में आधुनिकता एवं वैश्वीकरण के कारण परिवर्तन हो रहे हैं। प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि आधुनिकता एवं वैश्वीकरण के प्रभाव से मातृवंशीय खासी जनजाति की सामाजिक-व्यवस्था, परिवार और लैंगिक संबंधों जैसे मसलों में अवश्य परिवर्तन आए हैं; भाषा, धर्म, जीवन-शैली और सामुदायिक परंपराएँ भी बदल रही हैं; किंतु मातृवंशीय खासी संस्कृति की मूल संरचना अब भी सुरक्षित है। युवा पीढ़ी इस परिवर्तन में विशेष भूमिका निभा रही है — वह बदलते समय के साथ आधुनिक और वैश्विक जीवन-शैली को अपना तो रही है, परंतु साथ ही अपनी स्थानीय पहचान से भी जुड़ी हुई है। यह अध्ययन अकादमिक रूप से यह स्थापित करता है कि आज का मातृवंशीय खासी समाज आधुनिक एवं वैश्विक परिवर्तनों तथा प्रभावों को स्थानीय आवश्यकताओं और सांस्कृतिक मूल्यों के अनुरूप निरंतर चुनता और आत्मसात करता है।

बीज शब्द: वैश्वीकरण, खासी जनजाति, सांस्कृतिक पहचान, मातृवंशीयता, परंपरा और आधुनिकता, सामाजिक परिवर्तन, सांस्कृतिक पुनर्निर्माण, युवा संस्कृति।

प्रस्तावना:

समाजशास्त्रीय दृष्टि से वैश्वीकरण वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से स्थानीय समाज व्यापक वैश्विक सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक संबंधों से जुड़ते जाते हैं। एंथोनी गिडेन्स के अनुसार, वैश्वीकरण दूरस्थ स्थानों के बीच सामाजिक संबंधों के विस्तार और सुदृढ़ीकरण की प्रक्रिया है (Giddens, 1990), जबकि रोलैंड रोबर्टसन इसे विश्व के संकुचन तथा वैश्विक अंतर्संबंधों के प्रति बढ़ती सामाजिक चेतना के रूप में देखते हैं (Robertson, 1992)। वहीं दूसरी तरफ, आधुनिकीकरण एक ऐसी सामाजिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा पारंपरिक, ग्रामीण और कृषि-आधारित समाज धर्मनिरपेक्ष, शहरी और औद्योगिक समाज में परिवर्तित होता है। खासी समाज के संदर्भ में वैश्वीकरण एवं आधुनिकीकरण का प्रभाव केवल आर्थिक परिवर्तन तक सीमित नहीं है, बल्कि भाषा, विवाह, धार्मिक विश्वासों, जीवन-शैली, युवा संस्कृति और सांस्कृतिक पहचान में भी दिखाई देता है।

मेघालय का खासी समाज अपनी विशिष्ट मातृवंशीय सामाजिक व्यवस्था, भाषा, सामुदायिक संस्थाओं, पारंपरिक ज्ञान और प्रकृति-केंद्रित सांस्कृतिक दृष्टिकोण के लिए जाना जाता है। यद्यपि मातृवंशीयता में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है, फिर भी इसे पूर्ण लैंगिक समानता का पर्याय नहीं माना जा सकता। वैश्वीकरण एक ओर शिक्षा, रोजगार, संचार और सामाजिक गतिशीलता के नए अवसर प्रदान करता है, वहीं दूसरी ओर पारंपरिक जीवन-पद्धतियों पर बाहरी सांस्कृतिक प्रभावों का दबाव भी बढ़ाता है। अतः यह अध्ययन इसी प्रश्न का विश्लेषण करता है कि खासी सांस्कृतिक पहचान वैश्वीकरण और आधुनिकता के संदर्भ में किस प्रकार बदल, अनुकूलित और पुनर्व्याख्यायित हो रही है।

साहित्य समीक्षा:

खासी समाज पर उपलब्ध साहित्य में मातृवंशीयता, नातेदारी, लैंगिक संबंध, परिवार, भाषा, सांस्कृतिक परंपराओं तथा आधुनिक सामाजिक परिवर्तन को प्रमुख अध्ययन-विषयों के रूप में देखा गया है। वैश्वीकरण, आधुनिकीकरण, नगरीकरण, शिक्षा और प्रवासन के बढ़ते प्रभावों ने खासी समाज की पारंपरिक संस्थाओं और सांस्कृतिक जीवन में महत्वपूर्ण परिवर्तन उत्पन्न किए हैं। उपलब्ध साहित्य इन परिवर्तनों को समझने के लिए महत्वपूर्ण आधार प्रदान करता है।

हैमलेट बारेह (1985) ने खासी समाज की सामाजिक संरचना का अध्ययन करते हुए मातृवंशीय नातेदारी, पारंपरिक रीति-रिवाजों और सामुदायिक जीवन की केंद्रीय भूमिका को रेखांकित किया। उनके अनुसार, परिवार, वंश और सामाजिक संबंधों का संगठन मातृवंशीय व्यवस्था पर आधारित है, जो खासी सामाजिक एवं सांस्कृतिक पहचान की निरंतरता में महत्वपूर्ण योगदान देती है।

टिप्लुट नोंगब्री (2000) ने मातृवंशीयता और लैंगिक शक्ति-संबंधों के बीच मौजूद जटिलता को स्पष्ट किया। उन्होंने बताया कि खासी समाज मातृवंशीय है, किंतु इसे मातृसत्तात्मक अथवा पूर्ण लैंगिक समानता वाला समाज नहीं माना जा सकता। महिलाओं को वंश और संपत्ति में महत्वपूर्ण अधिकार प्राप्त होने के बावजूद सामाजिक, राजनीतिक और निर्णयात्मक क्षेत्रों में पुरुषों की प्रभावशाली भूमिका बनी रहती है। यह अध्ययन खासी समाज में संरचनात्मक लैंगिक असमानताओं को समझने में विशेष रूप से महत्वपूर्ण है।

रॉय (2018) ने खासी मातृवंशीय व्यवस्था के संक्रमणशील स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए पारंपरिक सामाजिक संस्थाओं, राजनीतिक प्रक्रियाओं और पुरुषों की संपत्ति-संबंधी दावेदारी के बीच उभरते अंतर्विरोधों को रेखांकित किया। इसी प्रकार, एलेना एट अल. (2017) ने शिक्षा, नगरीकरण और आर्थिक अवसरों के प्रभाव से कृषि, पारंपरिक ज्ञान तथा लैंगिक श्रम-विभाजन में हो रहे परिवर्तनों की ओर संकेत किया। इन अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि आधुनिकता का प्रभाव केवल आर्थिक क्षेत्र तक सीमित नहीं है, बल्कि दैनिक जीवन और सांस्कृतिक व्यवहारों को भी प्रभावित करता है।

बूले और गायकवाड़ (2021) का अध्ययन मेघालय की मातृवंशीय जनजातियों में व्याप्त लैंगिक असमानता के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक आयामों का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अध्ययन के अनुसार, मातृवंशीय व्यवस्था महिलाओं को संपत्ति, उत्तराधिकार और आर्थिक संसाधनों तक अपेक्षाकृत अधिक पहुँच प्रदान करती है। तथापि, यह आर्थिक लाभ स्वतः ही राजनीतिक समानता में परिवर्तित नहीं होता, क्योंकि सार्वजनिक निर्णय-निर्माण और राजनीतिक संस्थाओं में पुरुषों का प्रभुत्व अपेक्षाकृत अधिक बना रहता है। इस प्रकार, यह अध्ययन मातृवंशीय व्यवस्था की जटिल लैंगिक संरचना को उजागर करता है, जिसमें आर्थिक सशक्तीकरण और राजनीतिक भागीदारी के

बीच का अंतर स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। गोस्वामी (2024) खासी पुरुषत्व और जनजातीय पहचान के अंतर्संबंध को रेखांकित करते हुए बताते हैं कि किस प्रकार पुरुष मातृवंशीय सामाजिक व्यवस्था और पुरुषत्व से जुड़ी अपेक्षाओं के बीच सामंजस्य स्थापित करते हैं। वहीं, इखार (2024) भाषा-संपर्क, अंतर्विवाह और प्रवासन को खासी भाषायी एवं सांस्कृतिक पहचान में परिवर्तन के महत्वपूर्ण कारकों के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

शोध-अंतराल:

उपलब्ध साहित्य के अध्ययन-विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि मातृवंशीयता, लैंगिक संबंध, शिक्षा, भाषा, परिवार, निर्वासन, युवा संस्कृति और आधुनिकता जैसे विषयों पर वैश्वीकरण के प्रभावों का अध्ययन विभिन्न शोधों में अलग-अलग ढंग से किया गया है। किन्तु वैश्वीकरण और आधुनिकीकरण के विविध प्रभावों को समग्र रूप से जोड़कर खासी सांस्कृतिक पहचान में हो रहे व्यापक परिवर्तनों को समझने का एकीकृत प्रयास अपेक्षाकृत कम देखने को मिलता है। साथ ही, इन अध्ययनों में इस प्रश्न का भी स्पष्ट उत्तर नहीं मिलता कि आधुनिकीकरण और वैश्वीकरण खासी संस्कृति को कमजोर कर रहे हैं अथवा उसे नया रूप प्रदान कर रहे हैं। यही कारण है कि प्रस्तुत अध्ययन मुख्य रूप से इन्हीं बिंदुओं पर प्रकाश डालने का प्रयास करता है।

सैद्धांतिक रूपरेखा:

यह शोध वैश्वीकरण, आधुनिकता, सांस्कृतिक पहचान, सांस्कृतिक संकरण तथा लैंगिक-सत्ता संबंधों को परस्पर संबद्ध सामाजिक प्रक्रियाओं के रूप में देखता है, और यह समझने का प्रयास करता है कि वैश्विक परिवर्तन स्थानीय संरचनाओं को किस प्रकार प्रभावित करते हैं तथा समुदाय अनुकूलन एवं पुनर्निर्माण की प्रक्रियाओं के माध्यम से अपनी पहचान को किस प्रकार बनाए रखते हैं।

गिडेन्स का आधुनिकता एवं प्रतिबिम्बात्मकता सिद्धांत यह प्रतिपादित करता है कि आधुनिक समाज में व्यक्ति और समुदाय बदलती परिस्थितियों के अनुरूप अपनी पहचान पर निरंतर पुनर्विचार करते रहते हैं (Giddens, 1991)। खासी समाज में शिक्षा, नगरीकरण और डिजिटल संचार जैसे कारक इस प्रवृत्ति को, विशेष रूप से युवा वर्ग में, स्पष्ट रूप से जन्म देते हैं। इसी क्रम में, स्टुअर्ट हॉल सांस्कृतिक पहचान को किसी स्थिर इकाई के रूप में नहीं, बल्कि इतिहास, प्रतिनिधित्व और सामाजिक अनुभवों से निरंतर निर्मित होने वाली एक गतिशील प्रक्रिया के रूप में देखते हैं (Hall, 1990)। वहीं बोरदियो की हैबिटस (habitus) की अवधारणा दैनिक जीवन में अर्जित मूल्यों और व्यवहारों के गहरे अंतर्निवेश को समझने में सहायक सिद्ध होती है (Bourdieu & Nice, 1977)।

अप्पादुराई वैश्वीकरण को लोगों, मीडिया, तकनीक, विचारों और पूंजी के प्रवाहों से निर्मित एक प्रक्रिया के रूप में परिभाषित करते हैं (Appadurai, 1996), जबकि भाभा की हाइब्रिडिटी (hybridity) की अवधारणा वैश्विक-स्थानीय संपर्क से उत्पन्न मिश्रित सांस्कृतिक रूपों की व्याख्या करती है (Bhabha, 1994)। इसके अतिरिक्त, रोबर्टसन की ग्लोकलाइजेशन (Glocalization) की अवधारणा यह स्पष्ट करती है कि वैश्वीकरण स्थानीय संस्कृति को समाप्त नहीं करता, अपितु वैश्विक-स्थानीय अंतःक्रिया के माध्यम से नए सांस्कृतिक रूपों को जन्म देता है (Robertson, 1992, 1995)। अतः खासी संस्कृति पर मीडिया, शिक्षा, बाजार और तकनीक के प्रभावों को मात्र क्षरण के रूप में न देखकर अनुकूलन, पुनर्व्याख्या और पुनर्निर्माण की सतत प्रक्रियाओं के रूप में समझा जाना अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है।

इस अध्ययन में टिप्लुट नोंगब्री का कार्य विशेष महत्व रखता है। नोंगब्री (2000) के अनुसार, खासी मातृवंशीयता महिलाओं को सामाजिक सुरक्षा तो प्रदान करती है, किंतु यह मातृसत्ता अथवा पूर्ण लैंगिक समानता का पर्याय नहीं

मानी जा सकती; साथ ही उन्होंने मातृवंशीय व्यवस्था और पुरुष पहचान के मध्य उभरते तनावों को भी रेखांकित किया है। नोंगब्री (2010) ने आगे चलकर परिवार, लैंगिकता और पहचान के संदर्भ में मातृवंशीय व्यवस्था की सांस्कृतिक विशिष्टता तथा पितृवंशीय परिवर्तन की माँगों के मध्य उत्पन्न तनाव को भी उजागर किया।

इस प्रकार, यह शोध वैश्वीकरण को खासी सांस्कृतिक पहचान के मात्र क्षरण के रूप में नहीं, बल्कि परंपरा, आधुनिकता, लैंगिक संबंध, प्रतिरोध और सांस्कृतिक पुनर्निर्माण की एक गतिशील एवं सतत प्रक्रिया के रूप में देखता है।

शोध के उद्देश्य:

1. वैश्वीकरण और आधुनिकीकरण का खासी समाज की मातृवंशीय व्यवस्था, नातेदारी संरचना एवं पारिवारिक-लैंगिक संबंधों पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।
2. खासी सांस्कृतिक पहचान (भाषा, धर्म एवं परंपरा) में निरंतरता और परिवर्तन के स्वरूपों तथा युवा पीढ़ी द्वारा इसकी पुनर्व्याख्या एवं पुनर्संरचना का विश्लेषण करना।

शोध-पद्धति:

यह अध्ययन द्वितीयक स्रोतों पर आधारित गुणात्मक शोध है। इसमें वर्णात्मक एवं विश्लेषणात्मक शैली का उपयोग हुआ है। अध्ययन का उद्देश्य वैश्वीकरण के संदर्भ में मातृवंशीय खासी सांस्कृतिक पहचान में हो रहे परिवर्तनों को उपलब्ध शोध-साहित्य के वैज्ञानिक विश्लेषण के माध्यम से समझना है। अध्ययन के लिए खासी समाज, मातृवंशीय परिवार, नातेदारी, लैंगिक संबंध, भाषा, धर्म, नगरीकरण, प्रवासन, मीडिया, डिजिटल माध्यम, और सांस्कृतिक पहचान से संबंधित प्रकाशित सामग्री का उपयोग किया गया है। इसमें शोध-पत्र, अकादमिक पुस्तकें, शोध-प्रबंध, सरकारी रिपोर्ट और विश्वस्त संस्थागत प्रकाशन शामिल किए गए हैं। शोध-साहित्य के चयन में जिन बातों को ध्यान में रखा गया, वे हैं: उनका खासी समाज और इस अध्ययन के विषय से सीधा संबंध, उनका अकादमिक या संस्थागत रूप से विश्वसनीय होना, और इस अध्ययन के किसी प्रमुख हिस्से को समझने में उनका उपयोगी होना। चयनित साहित्य का विषयगत विश्लेषण (thematic analysis) किया गया। इसके लिए उन्हें इस अध्ययन की आवश्यकता के हिसाब से प्रमुख भागों में वर्गीकृत किया गया — मातृवंशीय व्यवस्था, परिवार एवं नातेदारी, लैंगिक एवं सत्ता-संबंध, भाषा, धर्म, शिक्षा और रोजगार, नगरीकरण, प्रवासन, मीडिया, डिजिटल प्रभाव, तथा युवा-संस्कृति। इसके बाद प्रत्येक भाग के विश्लेषण में तीन बिंदुओं पर ध्यान दिया गया — परिवर्तन, निरंतरता, और पुनर्निर्माण। फिर विभिन्न निष्कर्षों की तुलना की गई, और अंत में इस अध्ययन के उद्देश्यों के हिसाब से अंतिम निष्कर्ष पर पहुँचा गया।

खासी समाज की पारंपरिक संरचना:

खासी समाज, जो मुख्यतः मेघालय (भारत के उत्तर-पूर्वी क्षेत्र) में निवास करता है, अपनी मातृवंशीय सामाजिक संरचना के लिए विशिष्ट पहचान रखता है। इस व्यवस्था में वंश, कुल-पहचान और संपत्ति का उत्तराधिकार माँ के माध्यम से पीढ़ी-दर-पीढ़ी स्थानांतरित होता है, न कि पिता के माध्यम से (Roy, 2018)। परिवार की सबसे छोटी बेटी— खहुह (Ka Khadduh) — पारंपरिक रूप से पैतृक संपत्ति की संरक्षक मानी जाती है (Bareh, 1985; Nongbri, 2000a)। यह ध्यान देना आवश्यक है कि खासी समाज मातृवंशीय है, मातृसत्तात्मक नहीं। वंश और सत्ता यहाँ पृथक-पृथक पक्षों में विभाजित हैं—संपत्ति भले ही स्त्री-रेखा से गुजरे, किंतु वास्तविक निर्णायक शक्ति मातृकुल के मामा (U Kñi) के पास केंद्रित रहती है, जो अनुष्ठानिक एवं सामाजिक मामलों का नियंत्रण करता है। गाँव परिषद (Dorbar Shnong)

की सदस्यता भी परंपरागत रूप से पुरुषों तक सीमित है। यही कारण है कि विद्वान इसे "Matriliny without Matriarchy" की संज्ञा देते हैं (Gurdon, 1914; Nongkynrih, 2002; विश्वकर्मा, 2021)।

पारंपरिक खासी समाज में कुल (Kur) सामाजिक पहचान और नातेदारी का प्रमुख आधार है, जिसके भीतर विवाह वर्जित माना जाता है। गाँव स्तर पर सामुदायिक जीवन तथा सामूहिक निर्णय-प्रक्रिया में पारंपरिक मुखिया (Village Headman) और सामुदायिक परिषदों की केंद्रीय भूमिका रही है (Gurdon, 1914)।

परिवार, मातृवंश, नातेदारी, सामुदायिक सहयोग और धार्मिक-सांस्कृतिक परंपराओं का यह अंतर्संबंध खासी पहचान की आधारशिला है। वैश्वीकरण और आधुनिकता के दबावों के बावजूद, मातृवंशीयता आज भी खासी सामाजिक संरचना का जीवंत तत्व बनी हुई है।

आधुनिकता, वैश्वीकरण और खासी समाज में सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तन

आधुनिकता एवं वैश्वीकरण ने खासी समाज के सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक जीवन में व्यापक परिवर्तन उत्पन्न किए हैं। ये परिवर्तन एकरूप या रैखिक नहीं, बल्कि परंपरा और आधुनिकता के बीच निरंतर संवाद, समायोजन तथा बहुस्तरीय तनाव के रूप में प्रकट होते हैं। आर्थिक उदारीकरण, नए संचार-नेटवर्कों, प्रवासन, बाजार-विस्तार, धार्मिक-शैक्षिक परिवर्तनों तथा पितृसत्तात्मक प्रतिमानों के संपर्क के माध्यम से वैश्वीकरण ने खासी समाज को गहराई से प्रभावित किया है। साथ ही, इसने समाज के भीतर विद्यमान आंतरिक असमानताओं—शहरी-ग्रामीण आबादी, पहाड़ी-मैदानी क्षेत्र, संसाधन-स्वामी समुदाय एवं कॉरपोरेट निवेशक, स्थानीय उद्यमी एवं बाहरी व्यावसायिक समूह, तथा गतिशील शिक्षित युवा एवं हाशिए पर स्थित परिवार—को और अधिक स्पष्ट कर दिया है।

वैश्वीकरण के अन्य दूरगामी प्रभावों में ग्रामीण-जनजातीय समुदायों के विस्थापन की आशंका, कृषि एवं वन-आधारित आजीविकाओं का क्षरण, प्रथागत भूमि-व्यवस्थाओं पर बढ़ता दबाव, पर्यावरणीय क्षरण, संसाधनों के स्वामित्व को लेकर संघर्ष, तथा बाहरी आगमन से उपजी जनसांख्यिकीय आशंकाएँ सम्मिलित हैं। बेहतर शिक्षा, रोजगार की आकांक्षा और आर्थिक कठिनाइयों ने खासी तथा अन्य पूर्वोत्तर भारतीय युवाओं को दिल्ली जैसे महानगरों की ओर प्रवासित किया है, जिससे व्यापक अवसर तो मिलते हैं, परंतु सामाजिक बहिष्कार और नस्लीय भेदभाव जैसी चुनौतियाँ भी उभरती हैं।

आर्थिक स्तर पर पारंपरिक आजीविका-व्यवस्था उल्लेखनीय रूप से बदली है। कृषि और स्थानीय श्रम-विभाजन पर आधारित गतिविधियों के साथ-साथ बाजारोन्मुख आजीविकाओं का महत्व बढ़ा है, किंतु इसके लाभ असमान रहे हैं—मेघालय को अपर्याप्त आधारभूत संरचना के बावजूद व्यापक बाजारों में शामिल किया गया है, और स्थानीय संसाधनों का उपयोग बढ़ते हुए कॉरपोरेट हितों की पूर्ति हेतु हो रहा है। इन परिवर्तनों ने परिवारों के भीतर श्रम-विभाजन एवं लैंगिक भूमिकाओं को भी प्रभावित किया है, जबकि पर्यटन जैसे नए अवसरों ने आय के विकल्पों का विस्तार किया है (Ellena & Nongkynrih, 2017; Nongkynrih & Das, 2012)। इस प्रकार आर्थिक परिवर्तन केवल रोजगार तक सीमित नहीं, बल्कि पारंपरिक सामाजिक संबंधों और जीवन-निर्वाह की संपूर्ण प्रक्रिया को भी नया रूप दे रहे हैं। विशेष रूप से मातृवंशीय (matrilineal) सामाजिक व्यवस्था और लैंगिक संबंधों में आए परिवर्तन इस बात को स्पष्ट करते हैं कि आधुनिक सामाजिक शक्तियाँ पारंपरिक संस्थाओं को केवल समाप्त नहीं करतीं, बल्कि उन्हें नए सामाजिक संदर्भों में पुनर्विन्यस्त (Restructured) भी करती हैं (Nongbri, 2000b; Roy, 2018)। शिक्षा, शहरीकरण, आधुनिक जीवन-शैली तथा बाहरी सामाजिक प्रभावों के विस्तार के साथ खासी समाज की पारंपरिक संरचनाएँ निरंतर

परिवर्तन, अनुकूलन और पुनर्संरचना की प्रक्रिया से गुजर रही हैं।

धार्मिक क्षेत्र में खासी समाज ने परंपरा और आधुनिकता के बीच एक जटिल अंतःक्रिया का अनुभव किया है। Niam Khasi से ईसाई धर्म की ओर हुए बड़े पैमाने पर परिवर्तन, आधुनिक शिक्षा और व्यापक सामाजिक संपर्क ने पारंपरिक धार्मिक मान्यताओं और सांस्कृतिक प्रथाओं को प्रभावित किया है। फिर भी, धार्मिक परिवर्तन को पारंपरिक संस्कृति के पूर्ण परित्याग के रूप में नहीं देखा जा सकता। खासी समाज में स्थानीय सांस्कृतिक विरासत, सामुदायिक मूल्य और पारंपरिक पहचान आज भी सामाजिक जीवन के महत्वपूर्ण आधार बने हुए हैं (Bareh, 1985; Nongbri, 2006)। अतः धार्मिक परिवर्तन को केवल परंपरागत और आधुनिक आस्थाओं के बीच संघर्ष के रूप में देखने के बजाय, सह-अस्तित्व, अनुकूलन और सांस्कृतिक पुनर्गठन की एक सतत प्रक्रिया के रूप में समझना अधिक उपयुक्त होगा।

भाषिक स्तर पर आधुनिक सामाजिक परिवर्तन और वैश्विक संपर्कों ने खासी समाज में महत्वपूर्ण बदलाव उत्पन्न किए हैं। ईसाई मिशनरियों के आगमन के साथ अंग्रेजी को शिक्षा और चर्च-भाषा के रूप में प्रतिष्ठा मिली, जिसने खासी भाषा को प्रभावित करना आरंभ किया। आधुनिकीकरण के दौर में अंग्रेजी-माध्यम शिक्षा को आर्थिक उन्नति हेतु आवश्यक माना जाने लगा, जिससे अभिभावकों ने बच्चों को अंग्रेजी सिखाने को प्राथमिकता दी। वैश्वीकरण ने इंटरनेट और मीडिया के माध्यम से अंग्रेजी-हिंदी की प्रतिष्ठा और बढ़ा दी, जिसके परिणामस्वरूप खासी भाषा अनौपचारिक क्षेत्रों तक सिमटती गई। सांस्कृतिक पुनर्जागरण के प्रयासों के बावजूद अंतर-पीढ़ीगत हस्तांतरण क्रमशः कमजोर होकर भाषा की दीर्घकालिक जीवन्तता को चुनौती दे रहा है।

शिक्षा, प्रशासन, रोजगार और डिजिटल संचार के विस्तार के साथ अंग्रेजी तथा अन्य प्रमुख भाषाओं का प्रभाव और सुदृढ़ हुआ है, जिससे खासी भाषा के प्रयोग, संवर्धन और संरक्षण से जुड़े प्रश्न अधिक महत्वपूर्ण हो गए हैं। भाषा केवल संप्रेषण का माध्यम नहीं, बल्कि समुदाय की सांस्कृतिक पहचान, सामूहिक स्मृति और सामाजिक विरासत का भी आधार है। बहुभाषिक परिस्थितियों में खासी समुदाय अपनी भाषिक पहचान को व्यापक सामाजिक-भाषिक प्रभावों के बीच पुनर्परिभाषित कर रहा है (Dkhar, 2024a)। साथ ही, खासी भाषा और सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण के प्रति बढ़ती जागरूकता यह दर्शाती है कि भाषिक परिवर्तन केवल सांस्कृतिक क्षरण नहीं, बल्कि अनुकूलन, संरक्षण और पुनर्संरचना की भी प्रक्रिया है (Nongbri, 2006; Dkhar, 2024a)।

खासी समाज की पारिवारिक संरचना में आधुनिक सामाजिक-आर्थिक परिवर्तनों के प्रभाव विशेष रूप से स्पष्ट दिखाई देते हैं। परंपरागत मातृवंशीय व्यवस्था, जिसमें नातेदारी, उत्तराधिकार और पारिवारिक भूमिकाएँ विशिष्ट सांस्कृतिक नियमों द्वारा निर्धारित होती रही हैं, समकालीन परिस्थितियों में नए रूप ग्रहण कर रही है। शिक्षा, रोजगार के अवसरों, सामाजिक गतिशीलता और आधुनिक जीवन-शैली के प्रभाव से पारिवारिक संरचना तथा संबंधों में परिवर्तन आया है और पति-पत्नी तथा छोटी पारिवारिक इकाइयों की भूमिका अपेक्षाकृत अधिक महत्वपूर्ण होती जा रही है। साथ ही, संपत्ति के उत्तराधिकार, पारिवारिक निर्णय-निर्माण तथा स्त्री-पुरुष की भूमिकाओं को लेकर नई बहसें और पुनर्व्याख्याएँ उभर रही हैं। इसके बावजूद, मातृवंशीयता खासी सामाजिक और सांस्कृतिक पहचान का एक महत्वपूर्ण आधार बनी हुई है। इसलिए इन परिवर्तनों को पारंपरिक व्यवस्था के पूर्ण विघटन के बजाय परंपरा और आधुनिक सामाजिक शक्तियों के बीच निरंतर अनुकूलन और पुनर्संरचना की प्रक्रिया के रूप में समझना अधिक उपयुक्त है (Nongbri, 1988, 2000b; Roy, 2018)।

युवा पीढ़ी की पहचान और जीवन-शैली पर वैश्विक संस्कृति, सोशल मीडिया, डिजिटल तकनीक तथा लोकप्रिय सांस्कृतिक प्रवृत्तियों का विशेष प्रभाव दिखाई देता है। डिजिटल माध्यम युवाओं को स्थानीय सीमाओं से परे व्यापक

सामाजिक और सांस्कृतिक संसार से जोड़ते हैं, जिसके परिणामस्वरूप पहचान के नए रूप और अभिव्यक्ति के नए मंच विकसित हो रहे हैं। सोशल मीडिया के माध्यम से युवा न केवल वैश्विक सांस्कृतिक प्रभावों से जुड़ रहे हैं, बल्कि खासी जातीय और सांस्कृतिक पहचान को नए डिजिटल रूपों में व्यक्त और पुनर्निर्मित भी कर रहे हैं (Chhetri & Plathottam, 2021)। इसी प्रकार, मीडिया और बहुभाषिक सामाजिक वातावरण युवाओं की सांस्कृतिक तथा भाषिक पहचान के निर्माण को प्रभावित कर रहे हैं (Dkhar, 2024b)। इस प्रकार युवा वर्ग स्थानीय खासी पहचान और आधुनिक एवं वैश्विक जीवन-शैली के बीच संतुलन और समन्वय स्थापित करने की सक्रिय प्रक्रिया में संलग्न है।

अतः वैश्वीकरण को केवल सांस्कृतिक क्षरण या पारंपरिक संस्थाओं के विघटन की प्रक्रिया के रूप में देखना उचित नहीं होगा। यह एक जटिल एवं बहुआयामी सामाजिक प्रक्रिया है, जिसमें परिवर्तन के साथ-साथ सांस्कृतिक पुनर्निर्माण, अनुकूलन, संकरण (hybridization) और पहचान के नवीन रूप भी उभरते हैं। खासी समाज के संदर्भ में परंपरा और आधुनिकता के बीच संबंध को विरोध के बजाय निरंतर संवाद और पुनर्व्याख्या की प्रक्रिया के रूप में समझना अधिक उपयुक्त है। निष्कर्षतः, खासी समाज की सांस्कृतिक पहचान स्थिर या अपरिवर्तनीय नहीं है, बल्कि बदलती सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों के अनुरूप निरंतर पुनर्परिभाषित और पुनर्संरचित होने वाली एक गतिशील सामाजिक प्रक्रिया है (Appadurai, 1996; Robertson, 1995)।

परंपरा बनाम आधुनिकता: तनाव, परिवर्तन और समायोजन

खासी समाज के संदर्भ में परंपरा और आधुनिकता के संबंध को केवल संघर्ष अथवा परस्पर विरोध की दृष्टि से समझना पर्याप्त नहीं है। वास्तव में, यह परिवर्तन, तनाव, अनुकूलन और पुनर्संरचना की एक जटिल सामाजिक प्रक्रिया है, जिसमें पारंपरिक संस्थाएँ और आधुनिक प्रभाव निरंतर अंतःक्रिया करते हैं। अपनी विशिष्ट मातृवंशीय व्यवस्था, नातेदारी संरचना, सामुदायिक संबंधों और सांस्कृतिक पहचान के कारण खासी समाज एक विशिष्ट सामाजिक-सांस्कृतिक स्वरूप प्रस्तुत करता है। यहाँ मातृवंशीयता केवल उत्तराधिकार और वंश-निर्धारण तक सीमित नहीं है, बल्कि परिवार, लैंगिक संबंधों और सामुदायिक पहचान के संगठन से भी गहराई से जुड़ी है। दूसरी ओर, आधुनिक शिक्षा, शहरीकरण, रोजगार एवं आर्थिक अवसरों, सामाजिक गतिशीलता, संचार माध्यमों और आधुनिक जीवन-शैली के विस्तार ने पारंपरिक संस्थाओं तथा सांस्कृतिक मूल्यों को नए संदर्भों में पुनर्परिभाषित किया है। इस प्रकार, आधुनिक परिवर्तन और सांस्कृतिक परंपराएँ केवल विरोधी शक्तियों के रूप में कार्य नहीं करतीं, बल्कि उनके बीच संरक्षण, पुनर्व्याख्या और परिवर्तन की सतत प्रक्रिया विद्यमान रहती है (Nongbri, 2010; Roy, 2018)।

खासी सामाजिक संरचना में मातृवंशीयता (matrilineality) परिवार, नातेदारी, उत्तराधिकार और सामाजिक पहचान का केंद्रीय आधार रही है। वंश और पारिवारिक सदस्यता मुख्यतः मातृरेखा से निर्धारित होती है तथा नातेदारी संबंध सामाजिक संगठन और सामुदायिक जीवन को संरचित करते हैं। किंतु वैश्वीकरण, आधुनिक शिक्षा, नगरीकरण, बाजार अर्थव्यवस्था और रोजगार के नए अवसरों ने इस व्यवस्था को स्थिर बनाए रखने के बजाय निरंतर परिवर्तन और पुनर्संरचना की प्रक्रिया से जोड़ दिया है। नोंगब्री के अनुसार, खासी मातृवंशीयता कोई अपरिवर्तनीय सामाजिक व्यवस्था नहीं है; आधुनिक आर्थिक और सामाजिक परिवर्तनों के साथ पारिवारिक एवं लैंगिक संबंधों में नए तनाव, अंतर्विरोध और परिवर्तन उत्पन्न होते हैं (Nongbri, 2000b)।

शिक्षा और रोजगार के विस्तार के कारण ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी केंद्रों की ओर बढ़ता प्रवास विस्तृत मातृवंशीय परिवारों की पारंपरिक सह-निवास व्यवस्था और दैनिक पारिवारिक निकटता को प्रभावित कर रहा है। परिवार के सदस्यों का विभिन्न स्थानों पर निवास पारंपरिक नातेदारी नेटवर्क के प्रत्यक्ष नियंत्रण और सामुदायिक सहयोग को कुछ हद तक

कमजोर करता है। फिर भी, प्रवास और आधुनिक संचार माध्यम नातेदारी संबंधों को समाप्त नहीं करते, बल्कि आर्थिक सहायता, नियमित संचार और पारिवारिक दायित्वों के नए रूपों के माध्यम से उन्हें नए सामाजिक संदर्भों में पुनर्गठित करते हैं। इस प्रकार वैश्वीकरण ने खासी परिवार और नातेदारी व्यवस्था को केवल विघटित नहीं किया, बल्कि उनके संगठन और पारस्परिक संबंधों के स्वरूप को भी परिवर्तित किया है (Brulé & Gaikwad, 2021; Castells, 1997; Giddens, 1991; Nongkynrih, 2002)।

संपत्ति के अधिकार, उत्तराधिकार, लैंगिक भूमिकाओं तथा पारिवारिक निर्णय-निर्माण को लेकर भी महिलाओं और पुरुषों के बीच नए सामाजिक विमर्श उभरे हैं। आधुनिक शिक्षा तथा समानता और अधिकारों से संबंधित वैश्विक विचारों के प्रभाव में महिलाओं की भूमिका, पुरुषों के अधिकारों एवं जिम्मेदारियों और परिवार में विद्यमान सत्ता-संबंधों पर पुनर्विचार किया जा रहा है। अतः खासी समाज में वैश्वीकरण और आधुनिकता के प्रभाव को परंपरा के पूर्ण क्षरण के रूप में नहीं, बल्कि निरंतर अनुकूलन, पुनर्व्याख्या और पुनर्संरचना की जटिल सामाजिक प्रक्रिया के रूप में समझना अधिक उपयुक्त है (Brulé & Gaikwad, 2021; Giddens, 1990; Nongbri, 2000)।

धर्म, भाषा और सांस्कृतिक जीवन के क्षेत्रों में भी परंपरा और आधुनिकता के बीच जटिल संबंध विकसित हुए हैं। ईसाई धर्म के व्यापक प्रसार और आधुनिक धार्मिक संस्थाओं ने पारंपरिक खासी धार्मिक विश्वासों, अनुष्ठानों और सामाजिक प्रथाओं को प्रभावित किया है। फिर भी, यह परिवर्तन केवल पारंपरिक संस्कृति के क्षरण का संकेत नहीं है, क्योंकि अनेक खासी समुदाय अपनी सांस्कृतिक विरासत, पारंपरिक प्रतीकों, उत्सवों और सामुदायिक मूल्यों को आधुनिक धार्मिक पहचान के साथ समायोजित कर रहे हैं। धार्मिक जीवन में इसलिए सांस्कृतिक संकरण और पुनर्व्याख्या की प्रक्रिया दिखाई देती है, जिसमें व्यक्ति ईसाई धार्मिक पहचान और खासी सांस्कृतिक परंपराओं के विभिन्न तत्वों को एक साथ अपनाते हैं (Mylliemngap, 1999; Nongbri, 2000b)।

इसी प्रकार, आधुनिक शिक्षा, अंग्रेजी भाषा और डिजिटल माध्यमों के बढ़ते प्रभाव ने भाषा और संस्कृति के क्षेत्र में चुनौतियाँ तथा नई संभावनाएँ दोनों उत्पन्न की हैं। जहाँ अंग्रेजी शिक्षा, रोजगार और सामाजिक गतिशीलता से जुड़ी है, वहीं खासी भाषा सामूहिक पहचान, सांस्कृतिक विरासत और ऐतिहासिक स्मृति का महत्वपूर्ण आधार बनी हुई है। वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप स्थानीय भाषा और संस्कृति के संरक्षण के प्रति नई चेतना तथा सांस्कृतिक पुनरुत्थान के प्रयासों को प्रोत्साहन मिला है। अतः भाषा और सांस्कृतिक पहचान को संरक्षण, अनुकूलन और पुनर्निर्माण की सतत प्रक्रिया के रूप में देखना अधिक उपयुक्त है (Castells, 1997; Giddens, 1990; Nongbri, 2006)।

खासी समाज में युवा पीढ़ी परंपरा और आधुनिकता के बीच तनाव, अनुकूलन और पुनर्संरचना की चल रही प्रक्रिया की सबसे सक्रिय वाहक के रूप में उभरती है। सोशल मीडिया, इंटरनेट, फैशन, डिजिटल संचार और वैश्विक लोकप्रिय संस्कृति ने युवाओं की जीवन-शैली, उपभोग की आदतों और सामाजिक आकांक्षाओं को प्रभावित किया है। साथ ही, आधुनिक शिक्षा और वैश्विक संपर्क ने उन्हें स्थानीय सांस्कृतिक परंपराओं के प्रति नए दृष्टिकोण से विचार करने तथा अपनी पहचान को व्यापक सामाजिक संदर्भों में प्रस्तुत करने का अवसर दिया है (Nongbri, 2006)। Castells (1997) के अनुसार, वैश्वीकरण और नेटवर्क समाज के संदर्भ में सांस्कृतिक पहचान निरंतर निर्मित और पुनर्निर्मित होती रहती है।

खासी युवा केवल वैश्विक संस्कृति के निष्क्रिय उपभोक्ता नहीं हैं। वे संगीत, साहित्य, सांस्कृतिक उत्सवों और डिजिटल मंचों के माध्यम से अपनी स्थानीय पहचान और सांस्कृतिक विरासत को नए रूपों में अभिव्यक्त कर रहे हैं। आधुनिक संचार माध्यम स्थानीय संस्कृति को व्यापक दर्शकों तक पहुँचाने और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के नए अवसर उपलब्ध

कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसलिए आधुनिकता को केवल परंपरा के क्षरण की प्रक्रिया के रूप में देखना पर्याप्त नहीं है; यह परंपराओं के पुनर्निर्माण, पुनर्व्याख्या और नए सांस्कृतिक संदर्भों के साथ अनुकूलन की संभावनाएँ भी उत्पन्न करती है (Castells, 1997; Giddens, 1990; Nongbri, 2006)।

अतः खासी समाज में परंपरा और आधुनिकता के संबंध को द्वंद्वात्मक और गतिशील दृष्टिकोण से समझना आवश्यक है। आधुनिक परिवर्तन जहाँ पारंपरिक संस्थाओं, मूल्यों और सामाजिक संबंधों को चुनौती देते हैं, वहीं खासी समाज अपनी सांस्कृतिक विशिष्टताओं को नए सामाजिक संदर्भों के अनुरूप ढालने की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से संलग्न है। इसलिए खासी सांस्कृतिक पहचान को एक स्थिर अथवा अपरिवर्तनीय विरासत के बजाय निरंतर परिवर्तन, तनाव, अनुकूलन और समायोजन की प्रक्रियाओं से निर्मित होने वाली एक गतिशील सामाजिक पहचान के रूप में समझना अधिक उपयुक्त है। इस प्रकार, परंपरा और आधुनिकता के बीच संबंध को विरोध के बजाय सतत संवाद, चयनात्मक स्वीकृति और सामाजिक पुनर्संरचना की प्रक्रिया के रूप में देखना खासी समाज के समकालीन परिवर्तन को समझने के लिए अधिक सार्थक दृष्टिकोण प्रदान करता है।

निष्कर्ष:

प्रस्तुत अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि वैश्वीकरण, आधुनिकता, वैश्विक मीडिया, शिक्षा, बाज़ार और डिजिटल प्रौद्योगिकी ने मातृवंशीय खासी समाज की सांस्कृतिक पहचान तथा सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन में बहुआयामी एवं बहुस्तरीय परिवर्तन किए हैं। परंतु इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि मातृवंशीय खासी संस्कृति एवं परंपरा में कोई विघटन हुआ है या हो रहा है। खासी समाज वैश्विक प्रभावों के प्रति सक्रिय रूप से चयन, अनुकूलन एवं पुनर्व्याख्या की प्रक्रिया अपनाते हुए अपनी सांस्कृतिक विशेषताओं का आधुनिक परिप्रेक्ष्य में सतत पुनर्निर्माण कर रहा है। बढ़ती शिक्षा, शहरीकरण, प्रवासन, बाज़ार, मीडिया और डिजिटल तकनीक ने परिवार, नातेदारी, भाषा, धर्म, जीवन-शैली और युवा संस्कृति में बदलाव की गति को बढ़ाया है, और इन्हें नए ढंग से परिभाषित भी किया है। इस अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि मातृवंशीय खासी संस्कृति न तो कोई स्थिर अवधारणा है और न ही शीघ्र समाप्त होने वाली वस्तु, बल्कि एक सुदृढ़ और गतिमान अवधारणा है। साथ ही, आधुनिकता एवं वैश्वीकरण तथा मातृवंशीय खासी संस्कृति परस्पर विरोधी भी प्रतीत नहीं होतीं। और जो परिवर्तन हो रहे हैं, उनमें युवा पीढ़ी का बहुत बड़ा योगदान है। अतः निष्कर्षतः मातृवंशीय खासी समाज को परंपरा और आधुनिकता के मध्य संघर्षरत समाज के रूप में नहीं, बल्कि तनाव, बहस, अनुकूलन, समायोजन और सांस्कृतिक पुनर्निर्माण की एक गतिशील प्रक्रिया से गुजरते समाज के रूप में समझना कहीं अधिक उपयुक्त है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :

1. दोषी, एस. एल. (2007). आधुनिक समाजशास्त्रीय विचारक. जयपुर: रावत पब्लिकेशन्स.
2. दोषी, एस. एल., एवं त्रिवेदी, एम. (1996). उच्चतर समाजशास्त्रीय सिद्धांत. जयपुर: रावत पब्लिकेशन्स.
3. विश्वकर्मा, बेबी. (2021). खासी समाज: मातृसत्तात्मक या मातृवंशीय? *शोध-चिंतन पत्रिका*, 2, 88-92.
4. जैन, शोभिता. (2023). भारत में परिवार विवाह और नातेदारी (द्वितीय संस्करण). जयपुर: रावत पब्लिकेशन्स.
5. Appadurai, A. (1996). *Modernity at large: Cultural dimensions of globalization* (Vol. 1). Minneapolis: University of Minnesota Press.
6. Bareh, H. (1985). *The history and culture of the Khasi people* (2nd rev. & enl. Ed.). Guwahati: Spectrum Publications.

7. Bhabha, H. K. (1994). *The location of culture* (Vol. 199). London: Routledge.
8. Bourdieu, P., & Nice, R. (1977). *Outline of a Theory of Practice* (Vol. 16). Cambridge: Cambridge university press.
9. Brulé, R., & Gaikwad, N. (2021). Culture, Capital, and the Political Economy Gender Gap: Evidence from Meghalaya's Matrilineal Tribes. *The Journal of Politics*, 83(3), 834–850. <https://doi.org/10.1086/711176>
10. Castells, M. (1997). *The power of identity*. Oxford: Blackwell Publishers.
11. Chhetri, R. K., & Plathottam, F. (Dr) G. (2021). Digital Boundaries and Imaginaries of Khasi Ethnic Identity in Social Media. *International Journal of Qualitative Research*, 1(2), 140–149. <https://doi.org/10.47540/ijqr.v1i2.371>
12. Dkhar, G. D. (2024a). Navigating Identity: A Study of the Khasis in Meghalaya's Multilingual Borderlands. *Indian Journal of Language and Linguistics*, 5(2), 1–12. <https://doi.org/10.54392/ijll2421>
13. Dkhar, G. (2024b). The Impact of Media on Youth in Shillong: A Socio-Cultural and Linguistic Perspective. *Studies in Linguistics, Culture, and FLT*, 12, 33–49. <https://doi.org/10.46687/LMBD9061>
14. Ellena, R., & Nongkynrih, K. A. (2017). Changing gender roles and relations in food provisioning among matrilineal Khasi and patrilineal Chakhesang Indigenous rural People of North-East India. *Maternal & Child Nutrition*, 13(S3), e12560. <https://doi.org/10.1111/mcn.12560>
15. Giddens, A. (1990). *The consequences of modernity*. Stanford, California: Stanford University Press.
16. Giddens, A. (1991). *Modernity and self-identity*. Stanford, California: Stanford University Press.
17. Goswami, S. (2024). Being and Becoming: Men in a Matrilineal Society. *Society and Culture in South Asia*, 10(1), 97–119. <https://doi.org/10.1177/23938617231190350>
18. Gurdon, P. R. T. (1914). *The Khasis*. London: Macmillan and Co.
19. Hall, S. (1990). Cultural identity and diaspora. In *Identity: Community, Culture, Difference*. London: Lawrence & Wishart.
20. Myllemngap, L. (1999). A study of the relation between Christianity and Khasi-Jaintia culture 1899–1969 with particular reference to the theology and practice of the Khasi-Jaintia Presbyterian Church. *Transformation: An International Journal of Holistic Mission Studies*, 16(2), 70–71. <https://doi.org/10.1177/026537889901600210>
21. Nongbri, M. W. L. (2006). *Basic Foundations of Khasi Culture: Continuity and Change*. North-Eastern Hill University, Shillong. Retrieved from

<https://shodhganga.inflibnet.ac.in/handle/10603/62028>

22. Nongbri, T. (1988). Gender and the Khasi Family Structure: Some Implications of the Meghalaya Succession to Self-Acquired Property Act, 1984. *Sociological Bulletin*, 37(1/2), 71-82.
23. Nongbri, T. (2000a). Gender issues and tribal development: A case study of the Khasi. In *Changing women's status in India: Focus on the Northeast* (pp. 179-202). Guwahati: North Eastern Social Research Centre.
24. Nongbri, T. (2000b). Khasi Women and Matriliney: Transformations in Gender Relations. *Gender, Technology and Development*, 4(3), 359-395.
<https://doi.org/10.1177/097185240000400302>
25. Nongbri, T. (2008). *Gender, Matriliney, and Entrepreneurship: The Khasis of North-East India*. New Delhi: Zubaan.
26. Nongbri, T. (2010). Family, gender and identity: A comparative analysis of trans-Himalayan matrilineal structures. *Contributions to Indian Sociology*, 44(1-2), 155-178. <https://doi.org/10.1177/006996671004400208>
27. Nongkynrih, A. K. (2002). *Khasi society of Meghalaya: A sociological understanding*. New Delhi: Indus Publishing Company.
28. Nongkynrih, D., & Das, D. (2012). Tourism in Meghalaya: A case study of the cleanest village in India. *EXCEL International Journal of Multidisciplinary Management Studies*.
29. Robertson, R. (1992). *Globalization: Social theory and global culture*. London: Sage Publications.
30. Robertson, R. (1995). Glocalization: Time-space and homogeneity-heterogeneity. In *Global Modernities*. London: Sage Publications.
31. Roy, A. (2018). Discord in Matrilineality: Insight into the Khasi Society in Meghalaya. *Society and Culture in South Asia*, 4(2), 278-297.
<https://doi.org/10.1177/2393861718767238>